का आचरण करने वाला पाप से लिपायमान नहीं होना, उसी भाँति जैसे जल में रहने पर भी कमलपत्र का जल स्पर्श नहीं करता।।१०।।

तात्पर्य

ब्रह्मणि का अर्थ कृष्णभावनामृत है। प्राकृत-जगत् प्रकृति के त्रिविध गुणों अर्थात् 'प्रधान' की अभिव्यक्ति है। वेद-मन्त्र **सर्वमेतद्ब्रह्म तस्मादेतद्ब्रह्म नाम रूपमन्नं च जायते** तथा भगवद्गीता के वचन **मम योनिर्महद्ब्रह्म** से प्रकट होता है कि प्राकृत-जगत् की प्रत्येक वस्तु ब्रह्म की अभिव्यक्ति है और कार्यों की अभिव्यक्ति भिन्न-भिन्न होते हुए भी वे कारण से अभिन्न हैं। 'ईशोपनिषद्' में कथन है कि सब कुछ परब्रह्म श्रीकृष्ण से सम्बन्धित है; उन्हीं का है। जो यह भलीभाँति जान जाता है कि सब श्रीकृष्ण का है तथा वे सब पदार्थों के अधिपति हैं और इस कारण प्रत्येक वस्तु भगवत्-सेवा में ही नियोजित है, उस पुरुष का स्वाभाविक रूप से शुभ-अशुभ कर्मफलों से कोई प्रयोजन नहीं रहता। श्रीभगवान् द्वारा कर्म के लिए दिए गए प्राकृत शरीर को भी किसी विशेष सेवाकार्य के लिए कृष्णभावनामृत में संलग्न किया जा सकता है। ऐसा करने वाला पापपंक से अतीत हो जाता है, ठीक उसी भाँति जैसे जल में स्थित होने पर भी कमलपत्र जल से लिपायमान नहीं होता। गीता में श्रीभगवान् ने कहा है—**मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्य**: 'सम्पूर्ण कर्मों को मेरे प्रति समर्पण कर। सारांश यह है कि कृष्णभावनाशून्य व्यक्ति प्राकृत देह और इन्द्रियों को अपना स्वरूप समझ कर कर्म करता है, जबकि कृष्णभावनाभावित पुरुष यह समझ कर कर्म करता है कि यह देह श्रीकृष्ण की सम्पत्ति है, अतः इसे श्रीकृष्णसेवा के ही परायण होना चाहिए।

16/5

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति संगं त्यक्त्वात्मशुद्धये।।११।।

कायेन =शरीर से; **मनसा** =मन द्वारा; **बुद्ध्या** =बुद्धि से; **केवलैः** =शुद्ध; **इन्द्रियैः** = इन्द्रियों से **अपि** =भी; **योगिनः** =कृष्णभावनाभावित भक्त; **कर्म** =कर्म; **कुर्वन्ति** = करते हैं; **संगम्** =आसक्ति को; **त्यक्त्वा** =त्यागकर; **आत्म** =अन्तःकरण की; **शुद्धये** = शुद्धि के लिए।

अनुवाद

योगीजन आसक्ति को त्यागकर शरीर, मन, बुद्धि और इन्द्रियों के द्वारा भी केवल आत्मशुद्धि के लिए कर्म करते हैं।।११।।

तात्पर्य

श्रीकृष्ण की इन्द्रियतृप्ति के लिए शरीर, मन, बुद्धि अथवा इन्द्रियों द्वारा किया गया कृष्णभावनाभावित कर्म प्राकृत विकारों से मुक्त है। कृष्णभावनाभावित पुरुष की क्रियाओं का कोई लौकिक फल नहीं होता। अतः कृष्णभावनाभावित कर्म करने पर सदाचार सुगमता से सम्पन्न हो जाता है। श्रील रूप गोस्वामिचरण ने 'भक्तिरसामृत-सिन्धु' में इसका वर्णन इस प्रकार किया है—